बारह भावना

(पं. जयचन्दजी छाबड़ा कृत)

द्रव्य रूप करि सर्व थिर, परजय थिर है कौन।
द्रव्यदृष्टि आपा लखो, परजय नय करि गौन।।१।।
शुद्धातम अरु पंच गुरु, जग में सरनौ दोय।
मोह-उदय जिय के वृथा, आन कल्पना होय।।२।।
पर द्रव्यन तैं प्रीति जो, है संसार अबोध।
ताको फल गति चार में, भ्रमण कह्यो श्रुत शोध।।३।।
परमारथ तैं आत्मा, एक रूप ही जोय।
मोह निमित्त विकल्प घने, तिन नासे शिव होय।।४।।
अपने-अपने सत्त्व कूँ, सर्व वस्तु विलसाय।
ऐसे चितवै जीव तब, परतैं ममत न थाय।।५।।
निर्मल अपनी आत्मा, देह अपावन गेह।
जानि भव्य निज भाव को, यासों तजो सनेह।।६।।
आतम केवल ज्ञानमय, निश्चय-दृष्टि निहार।
सब विभाव परिणाममय, आस्रवभाव विडार।।७।।
निजस्वरूप में लीनता, निश्चय संवर जानि।
समिति गुप्ति संजम धरम, धरै पाप की हानि।।८।।
संवरमय है आत्मा, पूर्व कर्म झड़ जाय।
निजस्वरूप को पाय कर, लोक शिखर ठहराय।।९।।
लोकस्वरूप विचारि कें, आतम रूप निहारि।
परमारथ व्यवहार गुणि, मिथ्याभाव निवारि।।१०।।
बोधि आपका भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहिं।
भव में प्रापति कठिन है, यह व्यवहार कहाहिं।।११।।
दर्श-ज्ञानमय चेतना, आतम धर्म बखानि।
दया-क्षमादिक रतनत्रय, यामें गर्भित जानि।।१२।।